मनोविचारणा

मनके स्वरूप, कारण, कार्य, धर्म और स्थान आदि अनेक विषयोंमें दार्शनिकोंका नानाविध मतभेद है जो संक्षेपमें इस प्रकार है। वैशेषिक (वै० सू० ७. १. २३), नैयायिक (न्यायसू० ३. २. ६१) और तदनुगामी पूर्व-मीमांसक (प्रकरणप० पृ० १५१) मनको परमाणुरूप अतएव नित्य-कारण-रहित मानते हैं। सांख्य-योग और तदनुगामी वेदान्त उसे परमाणुरूप नहीं फिर भी अणुरूप और जन्य मानकर उसकी उत्पत्ति प्राकृतिक अहङ्कार तत्त्वसे[1] या अविद्यासे मानते हैं। बौद्ध और जैन परम्पराके अनुसार मन न तो व्यापक है और न परमाणुरूप। वे दोनों परम्पराएँ मनको मध्यम परिणामवाला और जन्य मानती हैं। बौद्ध परम्पराके[2] अनुसार मन विज्ञानात्मक है और वह उत्तर-वर्ती विज्ञानोंका समनन्तरकारण पूर्ववर्ती विज्ञानरूप है। जैन परम्पराके अनुसार पौद्गलिक मन तो एक खास प्रकारके सूक्ष्मतम मनोवर्गणा नामक जड़ द्रव्योंसे उत्पन्न होता[3] है और वह प्रतिक्षण शरीरकी तरह परिवर्तन भी प्राप्त करता रहता है जब कि भावमन ज्ञानशक्ति और ज्ञानरूप होनेसे चेतनद्रव्यजन्य है।

सभी दर्शनोंके मतानुसार मनका कार्य इच्छा, द्वेष, सुख, दुःख आदि गुणोंकी तथा उन गुणोंके अनुभवकी उत्पत्ति कराना है, चाहे वे गुण किसीके मतसे आत्मगत हों जैसे न्याय, वैशेषिक, मीमांसक, जैन आदिके मतसे; या

---

१. 'यस्मात् कर्मेन्द्रियाणि बुद्धिन्द्रियाणि च सात्त्विकादहंकारादुत्पद्यन्ते मनोऽपि तस्मादेव उत्पद्यते।'—माठर का० २७।

२. 'विज्ञानं प्रतिविज्ञप्तिः मन आयतनं च तत्। षण्णामनन्तराऽतीतं विज्ञानं यद्धि तन्मनः॥'—अभिधर्म० १. १६, १७। तत्त्वसं० का० ६३१।

३. 'यत् यत्समनन्तरनिरुद्धं विज्ञानं तत्तन्मनोधातुरिति। तद्यथा स एव पुत्रोऽन्यस्य पित्राख्यां लभते तदेव फलमन्यस्य बीजाख्याम्। तथेहापि स एव चक्षुरादिविज्ञानधातुरन्यस्याश्रय इति मनोधात्वाख्यां लभते। य एव षड् विज्ञान-धातव स एव मनोधातुः। य एव च मनोधातुस्त एव च षड् विज्ञानधातव इतीतरेतरान्तर्भावः.....योगाचारदर्शनेन तु षड्विज्ञानव्यतिरिक्तोऽप्यस्ति मनो-धातुः।'—स्फुटा० पृ० ४०, ४१।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्तःकरण—बुद्धि[1] के हों जैसे सांख्य-योग-वेदान्तादिके मतसे; या स्वगत ही हों जैसे बौद्धमतसे। बहिरिन्द्रियजन्य ज्ञानकी उत्पत्तिमें भी मन निमित्त बनता है और बहिरिन्द्रियनिरपेक्ष ज्ञानादि गुणोंकी उत्पत्तिमें भी वह निमित्त बनता है। बौद्धमतके सिवाय किसीके भी मतसे इच्छा, द्वेष, ज्ञान, सुख, दुःख संस्कार आदि धर्म मनके नहीं हैं। वैशेषिक, नैयायिक, मीमांसक और जैनके अनुसार वे गुण आत्माके हैं पर सांख्य-योग-वेदान्तमतके अनुसार वे गुण बुद्धि—अन्तःकरण—के ही हैं। बौद्ध दर्शन आत्मतत्त्व अलग न मानकर उसके स्थानमें नाम—मन ही को मानता है अतएव उसके अनुसार इच्छा, द्वेष, ज्ञान, संस्कार आदि धर्म जो दर्शनभेदसे आत्मधर्म या अन्तःकरणधर्म कहे गए हैं वे सभी मनके ही धर्म हैं।

न्याय-वैशेषिक-बौद्ध[2] आदि कुछ दर्शनोंकी परम्परा मनको हृदयप्रदेशवर्ती मानती है। सांख्य आदि दर्शनोंकी परम्पराके अनुसार मनका स्थान केवल हृदय कहा नहीं जा सकता क्योंकि उस परम्पराके अनुसार मन सूक्ष्म—लिङ्ग-शरीरमें, जो अष्टादश स्वोंका विशिष्ट निकायरूप है, प्रविष्ट है। और सूक्ष्म-शरीरका स्थान समग्र स्थूल शरीर ही मानना उचित जान पड़ता है अतएव उस परम्पराके अनुसार मनका स्थान समग्र स्थूल शरीर सिद्ध होता है। जैन परम्पराके अनुसार भावमनका स्थान आत्मा ही है। पर द्रव्यमनके बारेमें पक्ष-भेद देखे जाते हैं। दिगम्बर पक्ष द्रव्यमनको हृदयप्रदेशवर्ती मानता है जब कि श्वेताम्बर पक्षकी ऐसी मान्यताका कोई उल्लेख नहीं दिखता। जान पड़ता है श्वेताम्बर परम्पराको समग्र स्थूल शरीर ही द्रव्यमनका स्थान इष्ट है।

१. 'तस्माच्चित्तस्य धर्मा वृत्तयो नात्मनः'।—सर्वद० पात० पृ० ३५२।

२. 'ताम्रपर्णीया अपि हृदयवस्तु मनोविज्ञानधातोराश्रयं कल्पयन्ति।'—स्फुटा० पृ० ४१।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org